इकाई 2 रूपक भेद

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 रूपक भेद

- 2.2.1 नाटक
- 2.2.2 प्रकरण
- 2.2.3 भाण
- 2.2.4 व्यायोग
- 2.2.5 समवकार
- 2.2.6 डिम
- 2.2.7 ईहामृग
- 2.2.8 अंक
- 2.2.9 वीथी
- 2.2.10 प्रहसन

2.3 सारांश

2.4 शब्दावली

2.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- रूपक के भेदों से परिचित होंगे।
- नाटक, प्रकरण, भाण आदि के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- रूपक भेदों के ज्ञान के माध्यम से नाटक, प्रकरण, भाण आदि के मध्य भेद कर सकेंगे।
- संस्कृत की पारिभाषिक शब्दावली तथा विशिष्ट प्रयोग विधि का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! BSKC-133 'संस्कृत नाटक' पाठ्यक्रम की यह द्वितीय इकाई है। प्रथम इकाई में आपने नाटक की उत्पत्ति और विकास के विषय में अध्ययन किया। इस इकाई में आप रूपक भेदों के विषय में जानेंगे। आप जानते हैं कि रूपक दस हैं – नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग, समवकार, वीथी, अंक, ईहामृग। आचार्यों ने अपने-अपने ग्रन्थों में इन रूपक भेदों का विस्तृत वर्णन किया है। आचार्य भरत ने नाट्यशास्त्र में, धनंजय ने दशरूपक में, आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में रूपक के भेदों के विषय में अपने-अपने मत प्रस्तुत किए हैं। आचार्यों ने इन रूपक

भेदों के माध्यम से जिज्ञासुओं को यह समझाने का प्रयास किया है कि हम लक्षण के आधार पर किस कृति को नाटक कहेंगे? किसको प्रकरण कहेंगे? किसको भाण कहेंगे? इत्यादि। इस इकाई के माध्यम से आप रूपक भेदों के लक्षण को जानकर उनकी विविधताओं के आधार पर नाट्य रचना के भेदों को समझने की योग्यता का विकास करेंगे।

2.2 रूपक भेद

आचार्य भरतमुनि ने 36 अध्यायों में विभक्त अपने आकर ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में नाट्यशास्त्र के सम्बन्ध में प्रामाणिक और विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया है। नाट्य के माहात्म्य पर प्रकाश डालते हुए भरतमुनि का कथन है कि विश्व का कोई ऐसा ज्ञान, शिल्प, विद्या, कला, योग (प्रयोग) और कर्म नहीं है जो इसमें दिखाई न देता हो–

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
नासौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृश्यते।।

(ना.शा. 1/118)

महामुनि भरत, दशरूपककार धनंजय तथा साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने रूपकों के नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अंक, वीथी, प्रहसन प्रभृति दस भेद माने हैं–

नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोगसमवकार डिमाः।
इहामृगाङ्कवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश।।

(साहित्यदर्पण 6/3)

इनके अतिरिक्त आचार्य भोज तथा नाट्यदर्पणकार रामचन्द्र-गुणचन्द्र ने रूपक के बारह भेद स्वीकार किये हैं जिनमें 'नाटिका' और 'प्रकरणा' नामक दो भेद और परिगणित हैं। इन रूपकों के अतिरिक्त अट्ठारह उपरूपकों को भी स्वीकार किया गया है–

नाटिका त्रोटकं गोष्ठी सट्टकं नाट्यरासकम्।
प्रस्थानोल्लाप्यकाव्यानि प्रेङ्खणं रासकं तथा।।
संलापकं श्रीगदितं शिल्पकं च विलासिका।
दुर्मल्लिका प्रकरणी हल्लीशो भाणिकेति च।।
अष्टादश प्राहुरुपरूपकाणि मनीषिणः।
विना विशेषं सर्वेषां लक्ष्म नाटकवन्मतम्।।

(साहित्यदर्पण 6/4-6)

इन सभी रूपकों तथा उपरूपकों का परस्पर भेद वस्तु (कथावस्तु), नेता (नायक) तथा रस के आधार पर किया जाता है। ये तीनों रूपक के भेदक तत्त्व हैं जिसके लिए दशरूपककार ने लिखा है– **वस्तुनेतारसस्तेषां भेदकः**। वस्तु = इतिवृत्त अर्थात् कथा, कहानी। किसी एक रूपक-प्रकार की कथावस्तु, उसका नायक, नायक की प्रकृति तथा उसका प्रतिपाद्य-रस उसे अन्य रूपक-प्रकारों से भिन्न करता है।

2.2.1 नाटक

दस प्रकार के नाट्यों या रूपकों में नाटक सबसे महत्त्वपूर्ण तथा प्रथम रूपक है, जो रूपक के सभी लक्षणों से युक्त होता है। दशरूपककार धनंजय ने नाटक को अन्य सभी रूपकों की प्रकृति अर्थात् मूलकारण के रूप में स्वीकार किया है क्योंकि अधिकांश आचार्यो ने नाटक के सभी धर्म बतलाये हैं और प्रकरण आदि के सभी धर्मो को शब्दों के द्वारा न कहकर, अपितु **'शेषं नाटकवत्'** कहकर छोड़ दिया है।

यह उक्ति रूपकों में नाटक की महत्ता को स्पष्ट कर देती है। इसी कारण नाटक रूपक की एक विधा होकर भी उसके पर्याय के रूप में प्रचलित हो गया। यद्यपि अन्य रूपकों में भी रंजना का समावेश रहा करता है किन्तु नाटक की रंजना इतनी विचित्र होती है कि सामाजिकों का हृदय नाच उठता है। साहित्यदर्पणकार ने नाटक का लक्षण इस प्रकार किया है–

नाटकं ख्यातवृत्तं स्यात् पञ्चसन्धिसमन्वितम्।
विलासद्धर्यादिगुणवद्युक्तं नानाविभूतिभिः।।

सुखदुःखसमुद्भूति नानारसनिरन्तरम्।
पञ्चादिका दशपरास्तत्राङ्काः परिकीर्त्तिताः।।

प्रख्यातवंशो राजर्षिर्धीरोदात्तः प्रतापवान्।
दिव्योऽथ दिव्यादिव्यो वा गुणवान्नायको मतः।।

एक एव भवेदङ्गी शृङ्गारो वीर एव वा।
अङ्गमन्ये रसाः सर्वे कार्यो निर्वहणेऽद्भुतः।।

चत्वारः पञ्च वा मुख्याः कार्यव्यापृतपूरुषाः।
गोपुच्छाग्रसमाग्रं तु बन्धनं तस्य कीर्तितम्।।

(साहित्यदर्पण 06/7-11)

नाटक का इतिवृत्त इतिहास प्रसिद्ध होता है जिसमें मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहण पाँचों सन्धियों का समावेश होता है। नाटक मानव जीवन के सुख-दुःखात्मक भावों से उद्भूत विभिन्न रसों एवं भावों से युक्त होता है। इसकी रचना कम से कम पाँच तथा अधिक से अधिक दस अंकों में होती है। इसका नायक किसी प्रख्यात वंश में उत्पन्न राजर्षि होता है, जो धीरोदात्त तथा प्रतापी होता है। यह नायक दिव्य अर्थात् देवलोक का निवासी, अदिव्य अर्थात् मर्त्यलोक का निवासी तथा दिव्यादिव्य अर्थात् कोई दिव्य पुरुष जो मानव रूप में विराजमान हो, में से कोई भी महनीय व्यक्तित्व हो सकता है। नायक के समान उदात्त चरित वाले अन्य सहायक भी हुआ करते हैं। शृंगार या वीर में से कोई एक रस मुख्य रूप से अभिव्यञ्जित हुआ करता है तथा अन्य रस और भावादि मुख्य रस के उपकारक हुआ करते हैं। नाटक के अन्त में चार-पाँच पात्रों के चरित-वर्णन के साथ अद्भुत रस की योजना हुआ करती है। आचार्यो का मत है कि नाटक की रचना यदि गोपुच्छाग्र के समान होती है तो अच्छी लगती है। **'अभिज्ञानशाकुन्तलम्'** एवं **'उत्तररामचरितम्'** नाटक के उदाहरण के रूप में देखे जा सकते हैं।

2.2.2 प्रकरण

भवेत्प्रकरणे वृत्तं लौकिकं कविकल्पितम्।।
शृङ्गारोऽङ्गी नायकस्तु विप्रोऽमात्योऽथवा वणिक्।
सापायधर्मकामार्थपरो धीरप्रशान्तकः।।

नायिका कुलजा क्वापि वेश्या क्वापि द्वयं क्वचित्।
तेन भेदास्त्रयस्तस्य तत्र भेदस्तृतीयकः।।
कितवद्यूतकारादिविटचेटकसंकुलः। (साहित्यदर्पण 6/224-227)

इस प्रकार प्रकरण का इतिवृत्त लोक स्तर का होता है जिसे कवि प्रतिभा से कल्पित करता है। इसका अंगीरस शृंगार होता है। ब्राह्मण, अमात्य (सेनापति) अथवा व्यापारी में से कोई एक नायक होता है, जैसे मृच्छकटिक प्रकरण का नायक (चारुदत्त) ब्राह्मण है, मालतीमाधव प्रकरण का नायक (माधव) राजसचिव है तथा पुष्पभूषित प्रकरण का नायक वणिक् है। यह नायक धीरप्रशान्त कोटि का होता है। यह विपरीत परिस्थितियों में भी विभिन्न आपत्तियों का सामना करता हुए धर्म, अर्थ तथा काम की सिद्धि में तत्पर रहता है। प्रकरण में कुलस्त्री तथा गणिका (वेश्या) दो प्रकार की नायिकायें होती हैं। कोई प्रकरण ऐसा होता है जिसमें कुलस्त्री नायिका के रूप में चित्रित की गयी है जैसे पुष्पदूषित नामक प्रकरण में। कोई प्रकरण ऐसा है जिसमें वेश्या को नायिका बनाया गया है जैसे तरंगदत्त प्रकरण में। कोई प्रकरण ऐसा होता है जिसमें दोनों प्रकार की नायिकायें होती हैं जैसे मृच्छकटिक प्रकरण में। इन त्रिविध प्रकरण भेदों में तीसरा अर्थात् 'कुलजा-वेश्या-नायिका' द्वयात्मक जो प्रकरण है उसमें धूर्त, द्यूतकार, विट और चेट आदि का भी पर्याप्त चित्रण रहता है। प्रकरण की अन्य विशेषतायें नाटक के ही समान होती हैं।

2.2.3 भाण

भाण एक एकांकी रूपक है– जिसमें अकेला पात्र विट ही आकाशभाषित के माध्यम से उक्ति-प्रत्युक्ति करता हुआ धूर्तजनों के चरित का वर्णन करता है।

साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने भाण का लक्षण इस प्रकार किया है–

भाणः स्याद्धूर्तचरितो नानावस्थान्तरात्मकः।।
एकाङ्क एक एवात्र निपुणः पण्डितो विटः।
रङ्गे प्रकाशयेत्स्वेनानुभूतमितरेण वा।।
संबोधनोक्तिप्रत्युक्ती कुर्यादाकाशभाषितैः।
सूचयेद्वीरशृङ्गारौ शौर्यसौभाग्यवर्णनैः।।
तत्रेतिवृत्तमुत्पाद्यं वृत्तिः प्रायेण भारती।
मुखनिर्वहणे सन्धी लास्याङ्गानि दशापि च।।

(साहित्यदर्पण 06/227-230)

भाण रूपक का वह प्रकार है जिसमें धूर्तचरित का वर्णन रहा करता है। विभिन्न प्रकार के लोकोपयोगी व्यवहारों का संयोजन एक अङ्क में होता है और एक ही बुद्धिमान पात्र 'विट' नायक हुआ करता है जो अपने तथा दूसरे के अनुभवों को सामाजिकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस प्रकार विट आकाशभाषित का आश्रय लेकर किसी न किसी को सम्बोधित करते हुए उक्ति प्रत्युक्ति के माध्यम से विषय-वस्तु का परिचय

तथा अपना अभिप्राय सामाजिकों तक पहुँचता है। शौर्य-वर्णन के द्वारा वीर तथा विलास या सौभाग्य वर्णन के द्वारा शृङ्गार रस की सूचना दी जाती है। भाण का इतिवृत्त कविकल्पित हुआ करता है और भारती वृत्ति का बाहुल्य होता है।

भारती वृत्ति शब्द वृत्ति है और इसमें वाचिक अभिनय की प्रधानता होती है इसलिए भाण में भी भारती वृत्ति की प्रमुखता होती है। भारती वृत्ति की प्रधानता के कारण इसे भाण कहा जाता है। इसमें लास्य के गेयपद आदि दसों अङ्गों तथा मुख और निर्वहण सन्धियों की योजना अङ्गों सहित होती है। **'लीलामधुकर'** को आचार्यों ने भाण के रूप में उद्धृत किया है।

2.2.4 व्यायोग

ख्यातेतिवृत्तो व्यायोगः स्वल्पस्त्रीजनसंयुतः।
हीनो गर्भविमर्शाभ्यां नरैर्बहुभिराश्रितः।।
एकाङ्कश्च भवेदस्त्रीनिमित्तममरोदयः।
कैशिकीवृत्तिरहितः प्रख्यातस्तत्र नायकः।।
राजर्षिरथ दिव्यो वा भवेद्धीरोद्धतश्च सः।
हास्यशृङ्गारशान्तेभ्यः इतरेऽत्राङ्गिनो रसाः।।

(साहित्य 6/231-233)

व्यायोग का इतिवृत्त प्रख्यात होता है। इसमें स्त्रीपात्रों की संख्या बहुत कम तथा पुरुष पात्रों की संख्या अधिक होती है। इसमें गर्भ और विमर्श सन्धिओं की योजना नहीं रहती है। इसमें एक ही अंक होता है। इसमें ऐसे युद्ध अथवा संग्राम का वर्णन होता है जो स्त्री के कारण न हो। इसमें कैशिकी वृत्ति का अभाव रहता है। इसका नायक कोई प्रसिद्ध पुरुष हुआ करता है जिसके लिए राजर्षि अथवा देवविशेष होना आवश्यक हो। इसमें धीरोदात्त प्रकृति के ही नायक का चित्रण अपेक्षित है। इसमें शृंगार, हास्य तथा शान्त रस को छोड़कर अन्य रसों में से किसी को भी प्रधान रूप में रखा जा सकता है। व्यायोग के उदाहरण के रूप में 'सौगन्धिकाहरण' को लिया जा सकता है।

2.2.5 समवकार

रूपक का वह भेद जिसमें अनेक प्रयोजन भली-भाँति निबद्ध किए जाते हैं, वह समवकार कहलाता है। आचार्य विश्वनाथ ने समवकार का लक्षण इस प्रकार किया है–

वृत्तं समवकारे तु ख्यातं देवासुराश्रयम्।
सन्धयो निर्विमर्शास्तु त्रयोऽङ्कास्तत्र चादिमे।।
सन्धी द्वावन्त्ययोस्तद्वदेक एको भवेत्पुनः।
नायका द्वादशोदात्ताः प्रख्याता देवमानवाः।।

फलं पृथक्पृथक्तेषां वीरमुख्योऽखिलो रसः।
वृत्तयो मन्दकैशिक्यो नात्र बिन्दुप्रवेशकौ।।

वीथ्यङ्गानि च तत्र स्युर्यथालाभं त्रयोदश।
गायत्र्युष्णिङ्मुखान्यत्र च्छन्दांसि विविधानि च।।
त्रिशृङ्गारस्त्रिकपटः कार्यश्चायं त्रिविद्रवः।
वस्तु द्वादशनालीभिर्निष्पाद्यं प्रथमाङ्कगम्।।

द्वितीयेऽङ्के चतसृभिर्द्वाभ्यामङ्के तृतीयके।
धर्मार्थकामैस्त्रिविधः शृङ्गारः कपटः पुनः।।
स्वाभाविकः कृत्रिमश्च दैवजो विद्रवः पुनः।
अचेतनैश्चेतनैश्च चेतनाचेतनैः कृतः।।

(साहित्यदर्पण 6/234-240)

समवकार में देव अथवा असुरों से सम्बद्ध प्रसिद्ध इतिवृत्त हुआ करता है। विमर्श सन्धि को छोड़कर अन्य चारों सन्धियों की योजना तीन अङ्कों में हुआ करती है। प्रथम अङ्क में मुख तथा प्रतिमुख, द्वितीय अङ्क में गर्भ तथा तृतीय अङ्क में निर्वहण सन्धि की योजना होती है। इसमें बारह नायक होते हैं जो धीरोदात्त, प्रख्यात तथा दिव्य अथवा अदिव्य कोटि के हुआ करते हैं। प्रत्येक नायक का प्रयोजन पृथक्-पृथक् होता है।

अङ्गी रस के रूप में वीर तथा अङ्गरूप में अन्य रसों का उपनिबन्धन हुआ करता है। इसमें चारों ही वृत्तियों का विन्यास होता है किन्तु कैशिकी की अल्पता होती है। बिन्दु नामक अर्थप्रकृति तथा प्रवेशक नामक अर्थोपक्षेपक की योजना आवश्यक नहीं होती। उपयोगिता की दृष्टि से वीथी के तेरह अङ्गों की भी योजना होती है। गायत्री तथा उष्णिक् छन्दों का प्राधान्य होता है। इसमें धर्मकृत, अर्थकृत तथा कामकृत तीन प्रकार के शृङ्गार की योजना होती है। स्वाभाविक, कृत्रिम तथा दैवज तीन प्रकार के कपट और चेतन, अचेतन तथा चेतनाचेतन तीन प्रकार के विद्रवों की भी योजना होती है। प्रथम अङ्क में कामशृङ्गार (प्रहसनात्मक) की योजना होती है। इसमें अङ्कों का विभाजन काल के अनुसार होता है। प्रथम अङ्क की कथा बाहर नाड़ी (24 घड़ी), द्वितीय अङ्क की चार नाड़ी (8 घड़ी) तथा तृतीय अङ्क की कथा दो नाड़ी (4 घड़ी) की होती है। समवकार के उदाहरण के रूप में **'समुद्रमन्थन'** या **'अमृतमन्थन'** को लिया गया है।

बोध प्रश्न 1

1) **निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प पर सही (✓) का निशान लगाइए –**

i) नाट्यशास्त्र में अध्याय हैं – 36/34

ii) नाटक का इतिवृत्त होता है – कविकल्पित/प्रसिद्ध

iii) प्रकरण का अंगी रस है – वीर/शृंगार

iv) भाण में अंक होते हैं– 1/5

v) लीलामधुकर है – नाटक/भाण

vi) स्त्रीपात्रों की संख्या कम होती है – व्यायोग/समवकार

2) नाटक में कौन-कौन सी सन्धियाँ होती हैं?

.....

.....

3) प्रकरण का नायक किस कोटि का होता है?

.....

.....

4) भाण का इतिवृत्त कैसा होता है?

.....

.....

5) सौगन्धिकाहरण किस कोटि का रूपक है?

.....

.....

6) समवकार में नायकों की संख्या कितनी होती है?

.....

.....

7) समुद्रमन्थन किस कोटि का रुपक है?

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

1) नाटक क्या है? स्पष्ट कीजिए।

2) साहित्यदर्पणकार के अनुसार भाण पर प्रकाश डालिए।

2.2.6 डिम

मायेन्द्रजालसंग्रामक्रोधोद्भ्रान्तादिचेष्टितैः।
उपरागैश्च भूयिष्ठो डिमः ख्यातेतिवृत्तकः।।

अङ्गी रौद्ररसस्तत्र सर्वेऽङ्गानि रसाः पुनः।
चत्वारोऽङ्का मता नेह विष्कम्भकप्रवेशकौ।।

नायका देवगन्धर्वयक्षरक्षोमहोरगाः।
भूतप्रेतपिशाचाद्याः षोडशात्यन्तमुद्धताः।।

वृत्तयः कैशिकीहीना निर्विमर्शाश्च सन्धयः।
दीप्ताः स्युः षड्रसाः शान्तहास्यशृङ्गारवर्जिताः।।

(साहित्यदर्पण241-244)

माया, इन्द्रजाल, संग्राम आदि के कारण क्रोध से व्यग्र हृदय व्यक्तियों की चेष्टाओं का बाहुल्य होने के कारण इसमें निर्घात, उल्कापात, सूर्यचन्द्रोपराग आदि का वर्णन होता है। इसका इतिवृत्त प्रख्यात होता है। इसमें रौद्र अंगी रस होता है तथा अन्य अंग रूप में उपनिबद्ध किये जा सकते हैं। इसकी रचना चार अङ्कों में होती है तथा विष्कम्भक और प्रवेशक का होना अनिवार्य नहीं होता। इसमें सोलह नायक होते हैं जो देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, सर्प, भूत, प्रेत, पिशाच आदि अत्यन्त उद्धत प्रकृति के पात्र होते हैं। इसमें कैशिकी वृत्ति को छोड़कर अन्य तीनों वृत्तियों का समावेश होता है। इसमें विमर्श सन्धि के अतिरिक्त अन्य चारों सन्धियाँ (मुख, प्रतिमुख, गर्भ, निवर्हण अंगों) सहित होती हैं। इसमें शान्त, हास्य और शृंगार को छोड़कर अन्य छः रसों की दीप्ति आवश्यक होती है। डिम के उत्कृष्ट उदाहरण के रूप में अधिकांश आचार्यों द्वारा महाकवि वत्सराजकृत **'त्रिपुरदाह'** का ही उल्लेख किया गया है। महाकवि वत्सराज संस्कृत साहित्य के ऐसे कवि हैं जिन्होंने छः भिन्न प्रकार के रूपकों की रचना की जो षड्रूपकों के नाम से प्रसिद्ध हैं।

2.2.7 ईहामृग

ईहामृग रूपक का वह भेद है जिसमें नायक मृग के समान अलभ्य नायिका को प्राप्त करने की इच्छा (ईहा) करता है, इसी कारण इसे ईहामृग कहा गया है। ईहामृग की व्युत्पत्ति इस प्रकार की गई है–

'ईहा चेष्टा मृगस्येव स्त्रीमात्रार्था यत्र स ईहामृगः।'

आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में ईहामृग का लक्षण इस प्रकार किया है–

ईहामृगो मिश्रवृत्तश्चतुरङ्कः प्रकीर्तितः।
मुखप्रतिमुखे सन्धी तत्र निर्वहणं तथा।।

नरदिव्यावनियमौ नायकप्रतिनायकौ।
ख्यातौ धीरोद्धतावन्यो गूढभावादयुक्तकृत्।।

दिव्यस्त्रियमनिच्छन्तीमपहारादिनेच्छतः।
शृङ्गाराभासमप्यस्य किञ्चित्किञ्चित्प्रदर्शयेत्।।

पताकानायका दिव्या मर्त्या वापि दशोद्धताः।
युद्धमानीय संरम्भं परं व्याजान्निवर्तते।।

महात्मानो वधप्राप्ता अपि वध्याः स्युरत्र नो।
एकाङ्को देव एवात्र नेतेत्याहुः परे पुनः।।

दिव्यस्त्रीहेतुकं युद्धं नायकाः षडितीतरे।

(साहित्यदर्पण 6/245-249)

ईहामृग का इतिवृत्त प्रख्यात तथा कल्पित वृत्त का सम्मिश्रण हुआ करता है जिसकी रचना चार अङ्कों में होती है। कुछ आचार्यों ने ईहामृग की रचना के लिए एक ही अङ्क पर्याप्त माना है। इसमें मुख, प्रतिमुख तथा निर्वहण तीन ही सन्धियाँ होती हैं। देव तथा मानव दोनों में से कोई भी नायक अथवा प्रतिनायक के रूप में चित्रित हो सकता है किन्तु वह प्रख्यात तथा उद्धत प्रकृति का होता है।

प्रतिनायक अनुचित आचरण करने वाला होता है और न चाहती हुई दिव्य स्त्री को अपहरण आदि के द्वारा प्राप्त करना चाहता है जिससे शृङ्गाराभास की भी अभिव्यंजना हुआ करती है। इसमें उद्धत प्रकृति के दस पताकानायक होते हैं जो दिव्य तथा मानव दोनों में से कोई भी होते हैं। प्रतिनायक का बल युद्धस्थान में प्रदर्शित कर किसी न किसी बहाने (पलायन आदि) से युद्ध को रोक दिया जाता है और वधयोग्य जनों का भी वध वर्णित नहीं किया जाता है। कुछ आचार्यों का मत है कि इसमें छः नायक आवश्यक हैं जो किसी दिव्याङ्गना के कारण परस्पर लड़ते-झगड़ते हुए चित्रित किए जाते हैं।

2.2.8 अङ्क

रूपक का वह भेद है जिसकी कथावस्तु एक अङ्क में ही निबद्ध होती है और इसी कारण यह अङ्क कहलाता है। कुछ नाट्याचार्य अङ्क के स्थान पर उत्सृष्टिकाङ्क नाम अधिक उचित समझते हैं क्योंकि नाटकादि रूपकों का अन्तर्विभाग लगभग सभी आचार्यों ने अङ्क के रूप में स्वीकार किया है।

आचार्य विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में उत्सृष्टिकाङ्क का लक्षण इस प्रकार किया है–

उत्सृष्टिकाङ्क एकाङ्को नेतारः प्राकृता नराः।।
रसोऽत्र करुणः स्थायी बहुस्त्रीपरिदेवितम्।
प्रख्यातमितिवृत्तं च कविर्बुद्ध्या प्रपञ्चयेत्।।
भाणवत्सन्धिवृत्यङ्गान्यस्मिञ्जयपराजयौ।
युद्धं च वाचा कर्त्तव्यं निर्वेदवचनं बहु।।

(साहित्यदर्पण 6/250-252)

उत्सृष्टिकाङ्क की रचना एक अङ्क में होती है जिसमें किसी प्रख्यातवृत्त को कवि अपनी बुद्धि द्वारा विस्तृत कर प्रस्तुत करता है। इसमें दिव्य पुरुषों का अभाव होता है और सामान्य पुरुष ही नायक के रूप में चित्रित किए जाते हैं। नारियों के विलाप का वर्णन प्रचुर मात्रा में होने के कारण करुण रस अङ्गी रूप में होता है। मुख तथा निर्वहण दोनों सन्धियों की योजना अङ्गों सहित होती है और केवल भारती वृत्ति का ही विन्यास हुआ करता है। भारती वृत्ति के कारण इसमें जय-पराजय, युद्ध-नियुद्ध आदि वाणी द्वारा ही प्रकाशित किए जाते हैं। यह स्त्रियों के विलाप से युक्त होता है जिससे व्याकुलमय चेष्टाएँ तथा निर्वेदप्राय भाषण की अधिकता होती है। इसके उदाहरण के रूप में **'कुसुमशेखरविजय'** को लिया गया है।

2.2.9 वीथी

वीथी वह रूपक भेद है जो भारती वृत्ति का एकदेश (अङ्ग) तथा अन्य रूपकों के लिए उपकारक माना गया है। इसे वीथी इसलिए कहा जाता है क्योंकि वह वीथी अर्थात् गली के समान वक्रतापूर्ण होती हैं। यह वक्रोक्तिवैचित्र्य वीथी के तेरह अङ्गों के रूप में माना जाता है।

वीथी का लक्षण साहित्यदर्पण में इस प्रकार किया गया है–

वीथ्यामेको भवेदङ्कः कश्चिदेकोऽत्र कल्प्यते।
आकाशभाषितैरुक्तैश्चित्रां प्रत्युक्तिमाश्रितः।।

सूचयेद्भूरि शृङ्गारं किञ्चिदन्यान्रसान् प्रति।
मुखनिर्वहणे सन्धी अर्थप्रकृतयोऽखिलाः।।
अस्यास्त्रयोदशाङ्गानि निर्दिशन्ति मनीषिणः।
उद्धात्य(त)कावलगिते प्रपञ्चस्त्रिगतं छलम्।।
वाक्केल्यधिबले गण्डमवस्यन्दितनालिके।
असत्प्रलापव्याहारमृद(मार्द)वानि च तानि तु।।

(साहित्यदर्पण 6/253-256)

वीथी की रचना एक अङ्क में होती है जिसमें एक पात्र आकाशभाषित के माध्यम से या फिर दो पात्र उत्तर-प्रत्युत्तर के द्वारा अन्य काल्पनिक पात्रों से बातचीत करते हुए चित्रित किए जाते हैं। इसमें शृङ्गार रस की अभिव्यक्ति (सूचना) अधिक तथा अन्य रसों की कुछ कम होती है। इसमें मुख तथा निर्वहण दो ही सन्धियाँ अङ्गों सहित रहा करती हैं तथापि अर्थप्रकृतियाँ पाँचों ही रहती हैं। शृङ्गार रस की अधिकता के कारण इसमें कैशिकी वृत्ति का बाहुल्य होता है। वीथी के उद्धात्यक, अवलगित, प्रपञ्च, त्रिगत, छल, वाक्केलि, अधिबल, गण्ड, अवस्यन्दित, अङ्ग माने गऐ हैं। **'वकुलवीथी'** और **'इन्दुलेखा'** वीथी-रूपक के उदाहरण हैं।

2.2.10 प्रहसन

प्रहसन रूपक का वह भेद है जिसमें हास्य रस की प्रधानता के साथ धूर्त, पाखण्डी आदि के चरित्रों का चित्रण हुआ करता है जिससे सामाजिकों को आनन्द तो प्राप्त होता ही है साथ ही वे इन लोगों के फेर में पड़ने से बच जाते हैं–

साहित्यदर्पण में प्रहसन का लक्षण इस प्रकार किया है–

भाणवत्सन्धिसन्ध्यङ्गलास्याङ्गाङ्कैर्विनिर्मितम्।
भवेत्प्रहसनं वृत्तं निन्द्यानां कविकल्पितम्।।
अत्र नारभटी, नापि विष्कम्भकप्रवेशकौ।
अङ्गी हास्यरसस्तत्र वीथ्यङ्गानां स्थितिर्न वा।

शुद्ध प्रहसन–

तपस्विभगवद्विप्रप्रभृतिष्वत्र नायकः।
एको यत्र भवेद्धृष्टो हास्यं तच्छुद्धमुच्यते।।

सङ्कीर्ण प्रहसन–

आश्रित्य कञ्चन जनं संकीर्णमिति तद्विदुः।
वृत्तं बहूनां धृष्टानां सङ्कीर्णं केचिदूचिरे
तत्पुनर्भवति द्वयङ्कमथवैकाङ्कनिर्मितम्।।

विकृत प्रहसन–

विकृतं तु विदुर्यत्र षण्ढकञ्चुकितापसाः।
भुजङ्गचारणभटप्रभृतेर्वेषवाग्युताः।।

(साहित्यदर्पण 6/264-268)

प्रहसन का इतिवृत्त कविकल्पित होता है जिसकी रचना एक अङ्क में होती है और नायक कोई अधम प्रकृति का व्यक्ति होता है। इसमें भाण के समान मुख तथा निर्वहण दो सन्धियाँ अङ्गों सहित होती हैं और लास्य के दसों अङ्गों की योजना होती है। इसमें आरभटी वृत्ति तथा विष्कम्भक और प्रवेशक की योजना नहीं होती है। इसमें हास्य रस अङ्गी रस के रूप में अभिव्यंजित हुआ करता है और हास्य के स्मित, हसित, विहसित, उपहसित, अपहसित तथा अतिहसित प्रभृति छः प्रकारों का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। कुछ आचार्यों ने प्रहसन के शुद्ध, विकृत तथा सङ्कीर्ण तीन भेद मानते हैं और कुछ आचार्यों ने विकृत को सङ्कीर्ण में ही अन्तर्भूत मानकर शुद्ध तथा सङ्कीर्ण दो ही भेद स्वीकार किए हैं। जिस प्रहसन में तपस्वी, संन्यासी तथा ब्राह्मण आदि के हास-परिहास पूर्ण संवाद, आभूषण तथा अविकृत भाषा और व्यवहार के द्वारा विशेष भावों और वस्तु की अभिव्यञ्जना हो वह शुद्ध प्रहसन कहलाता है। शुद्ध प्रहसन का उदाहरण **'कन्दर्पकेलि'** है। विकृत प्रहसन कामुक, चारण, योद्धा आदि की वेशभूषा का अनुकरण करने वाले नपुंसक, कञ्चुकी और तपस्वी आदि पात्रों से युक्त होता है। **'कलिकेलि'** विकृत प्रहसन का उदाहरण है। जिस प्रहसन में वेश्या, विट, चेट, नपुंसक, विदूषक आदि का चित्रण होता है और असभ्य वेशभूषा, वस्त्र, चेष्टा आदि का अनुकरण किया जाता है वह सङ्कीर्ण अथवा मिश्र प्रहसन कहलाता है। **'लटकमेलक'**, **'धूर्तचरितम्'** तथा **'सैरन्ध्रिका'** आदि सङ्कीर्ण प्रहसन के उदाहरण हैं।

बोध प्रश्न 2

1) निम्नलिखित में सत्य (✓) तथा असत्य (×) का चयन कीजिए –

i) डिम का इतिवृत्त प्रख्यात होता है – ( )

ii) डिम में 12 नायक होते हैं – ( )

iii) ईहामृग में 5 अंक होते हैं – ( )

iv) अंक में सामान्य पुरुष नायक होता है – ( )

v) वीथी में कैशिकी वृत्ति का बाहुल्य होता है – ( )

vi) प्रहसन का अंगीरस करुण है – ( )

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

i) डिम का अंगी रस ..... होता है।

ii) ईहामृग का नायक ..... तथा ..... होता है।

iii) अंक का अंगी रस ..... होता है।

iv) प्रहसन का इतिवृत्त ..... होता है।

v) शुद्ध प्रहसन का उदाहरण ..... है।

अभ्यास प्रश्न 2

निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए –

i) डिम

ii) ईहामृग

iii) प्रहसन

2.3 सारांश

प्रिय विद्यार्थियों! इस इकाई में आपने रूपक भेदों का अध्ययन किया। आपको यह ज्ञात है कि रूपकों की संख्या 10 है। उन दशरूपकों में नाटक प्रमुख है। नाटक में कम से कम पाँच और अधिकतम दस अंक होते हैं। इसका इतिवृत्त प्रख्यात और नायक धीरोदात्त प्रकृति का होता है। प्रकरण में दस अंक होता है। इसका इतिवृत्त कविकल्पित तथा नायक धीरप्रशान्त होता है। भाण एकांकी रूपक है। इसमें धूर्तजनों का चरित्र वर्णित होता है। प्रहसन में एक अंक होता है तथा इसका कथानक कविकल्पित होता है। ऐसा रूपक जिसमें उत्पात वर्णन का बाहुल्य हो डिम कहलाता है। इसका इतिवृत्त कविकल्पित होता है। व्यायोग का इतिवृत्त तथा नायक दोनों प्रख्यात होते हैं। इसमें स्त्री पात्रों की संख्या कम एवं पुरुष पात्रों की संख्या अधिक होती है तथा एक दिन की घटना का वर्णन होता है। समवकार में देव तथा असुरों से सम्बद्ध प्रसिद्ध इतिवृत्त होता है। इसमें तीन अंक होते हैं तथा वीर अंगी रस होता है। वीथी में एक अंक होता है जिसमें एक या दो पात्र आकाशभाषित के माध्यम से उत्तर प्रत्युत्तर के द्वारा काल्पनिक वार्तालाप करते हैं। इसमें श्रृंगार रस की अधिकता होती है। अंक नामक रूपक भेद भी एक अंक का होता है। इसमें कवि किसी प्रख्यात वृत्त को अपनी बुद्धि द्वारा विस्तृत रूप में प्रस्तुत करता है। ईहामृग का इतिवृत्त प्रख्यात तथा कल्पित का मिश्रित रूप होता है। इसमें चार अंक होते हैं। उसका नायक उद्धत प्रकृति का देव अथवा मनुष्य होता है। इस प्रकार इस इकाई के माध्यम से आपने रूपक के दशविध भेदों का लक्षण सहित अध्ययन किया।

2.4 शब्दावली

आकर – श्रेष्ठ

प्रतिपाद्य – प्रयोजन

पर्याय – समानार्थक

प्रख्यात – प्रसिद्ध

उक्ति – कथन

इतिवृत्त – कथावस्तु

उत्कृष्ट – उन्नत

आपत्ति – संकट

गणिका – वेश्या

2.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- साहित्यदर्पण– विश्वनाथ, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 1957.
- नाट्यशास्त्र– भरतमुनि, गायकवाड़ ऑरियन्टल सीरीज, बड़ौदा।
- नाट्यदर्पण– रामचन्द्र गुणचन्द्र (हिन्दी व्याख्या) दिल्ली विश्वविद्यालय, 1961
- दशरूपकम्– डॉ0 श्रीनिवास शास्त्री, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार मेरठ–2, वि0स0– 2036, 1969 ई0

2.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) i) 36 ii) प्रसिद्ध iii) शृंगार iv) एक v) भाण vi) व्यायोग
2) नाटक में मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निवर्हण पाँच सन्धियाँ होती हैं।
3) प्रकरण का नायक धीरप्रशान्त कोटि का होता है।
4) भाण का इतिवृत्त कविकल्पित होता है।
5) सौगन्धिकाहरण व्यायोग कोटि का रूपक है।
6) समवकार में नायकों की संख्या 12 होती है।
7) समुद्रमन्थन समवकार कोटि का रूपक है।

बोध प्रश्न 2

1) i) सत्य ii) असत्य iii) असत्य iv) सत्य v) सत्य vi) असत्य
2) i) रौद्र ii) प्रख्यात, उद्धत iii) करुण iv) कविकलिपत v) कन्दर्पकेलि

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।